मारवाड़ राज्य की शासन प्रणाली (1500–1800 ई.)

डॉ. जितेन्द्र सिंह भाटी

आलोच्य काल (1500–1800 ई.) का मारवाड़, राजपूताना के राजनीतिक मानचित्र पर एक विशाल और सशक्त रियासत के रूप में स्थापित था। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह राज्य न केवल राजस्थान की सबसे बड़ी रियासतों में से एक था, बल्कि इसकी भौगोलिक विविधता, सामाजिक संरचना और आर्थिक संसाधन इसे विशिष्ट बनाते थे। राज्य का क्षेत्र उत्तर में बीकानेर, दक्षिण में मेवाड़, पश्चिम में जैसलमेर तथा पूर्व में जयपुर की सीमाओं से घिरा हुआ था। इतने व्यापक भू-भाग पर शासन चलाना किसी भी सम्राट या केन्द्रीय प्रशासन के लिए एक जटिल और चुनौतीपूर्ण कार्य था।

राज्य की विशालता और विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों के कारण केन्द्रीय पदाधिकारियों द्वारा प्रत्यक्ष नियंत्रण रखना अत्यन्त कठिन था। इसीलिए प्रशासन को सुचारू, संगठित एवं प्रभावी बनाने के उद्देश्य से तत्कालीन शासकों ने एक सुव्यवस्थित प्रशासनिक तंत्र विकसित किया। शासन व्यवस्था को सुदृढ़ बनाए रखने हेतु राज्य को विभिन्न प्रशासनिक इकाइयों में विभाजित किया गया, जिनमें परगना, नगर तथा ग्राम प्रशासन प्रमुख थे।

मारवाड़ राज्य में प्राय: 22 परगने विद्यमान थे, जो अपने-अपने मुख्यालयों के नाम से प्रसिद्ध थे—जोधपुर, मेड़ता, नागौर, पाली, फलोदी, सोजत, जैतारण, जालोर, डीडवाना, देसूरी, दौलतपुरा, भीनमाल, नांवा, परबतसर, पचपदरा, बिलाड़ा, कोलिया, शिव, सिवाना, मारोठ, सांभर तथा सांचौर। प्रत्येक परगना अपने स्तर पर प्रशासनिक, राजस्व और न्यायिक कार्यों का संचालन करता था, जिससे स्थानीय शासन व्यवस्था सशक्त एवं क्रियाशील बनी रहती थी।

इन परगनों के अतिरिक्त, राज्य के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए थाना एवं कचहरी प्रशासन की स्थापना की गई। यह व्यवस्था राज्य की सुरक्षा, न्यायिक प्रक्रिया और कर-संग्रह प्रणाली के लिए अत्यंत आवश्यक थी। परगनों के अंतर्गत अधिकारीगण, जैसे कि हाकिम, अमलदार, कानूनगो, पटवारी और कचहरी अधिकारी, राज्य के नीतिगत निर्देशों को जन-स्तर तक पहुँचाने में प्रमुख भूमिका निभाते

थे। अत: प्रशासन के अनुसार सम्बद्ध पदाधिकारियों की यहाँ विस्तार से चर्चा की गयी है जो इस प्रकार से है–

परगने का प्रमुख अधिकारी हाकिम

परगने का सर्वोच्च पदाधिकारी हाकिम कहलाता था। उसकी नियुक्ति प्रधान और दीवान की सलाह से मारवाड़ के शासक द्वारा की जाती थी।[1] वह दीवान के अधीन हुआ करता था, दीवान के माध्यम से ही शासक के आदेश उस तक पहुँचते और उसकी प्रार्थना शासक तक पहुँचती थी। हाकिम के कार्य निम्नलिखित थे[2]–

1. परगनों की सुरक्षा का दायित्व हाकिम पर होता था। वहाँ किसी प्रकार की चोरी होने पर, उसका उत्तरदायित्व बनता था कि वह उसमें निष्पक्ष जांच करे और किसी भी प्रकार की लापरवाही या असावधानी से कार्य नहीं करे। साथ ही चोरी होने पर क्षतिपूर्ति की जाए और चोरों पर अंकुश लगाए तथा उन्हें पकड़कर उनके हथियार जब्त करे।
2. परगने के व्यापारियों की सुरक्षा का दायित्व भी उसी पर होता था। उसका कर्तव्य था कि वह व्यापारियों की वस्तुओं को बिना जाँच और सलाह के नहीं बेचने दे और वस्तुओं के भाव का निरीक्षण करे।
3. जालोर परगने में वनभूमि अधिक है अत: वहाँ का हाकिम भी प्रभावशाली हो ताकि वहाँ पर किसी प्रकार का अपराध न हो सके।
4. सामंतों की सेनाएं हाकिम के अधीन रखी जाएं ।
5. वह यह भी ध्यान रखे कि कोई प्रजा से अनुचित कर वसूली नहीं करे।
6. हत्या के मामले में मृत्यु दण्ड ही उचित है परन्तु इस संबंध में दीवान के माध्यम से शासक की अनुमति आवश्यक होती थी।
7. किसी की जमीन पर अनाधिकृत कब्जा होने अथवा पशु धन की चोरी होने की स्थिति में उसे इसकी शीघ्र ही क्षतिपूर्ति करनी चाहिए।

उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त वह अपने परगने के आय-व्यय के आंकड़े भी शासक के सम्मुख प्रस्तुत किया करता था। वर्ष में प्राय: पांच बार ये आंकड़े प्रस्तुत किए जाते थे।[3] अपने परगने की सीमा में स्थित जागीरों के जागीरदारों से भी वार्षिक करों की वसूली का कार्य भी हाकिम ही करता था। जागीर जब्त होने की स्थिति में वहां के प्रशासन का कार्य भी संबंधित हाकिम ही करता था।[4] परगने से राजस्व वसूली का कार्य अधीनस्थ कर्मचारियों से करवाता था। हाकिम के अधीन एक सेना होती थी, जिसमें सैनिकों की भर्ती

वह स्वयं करता था। परगने के सैनिक व्यय का हिसाब भी हाकिम को ही रखना पड़ता था। राज्य के सीमांत परगने की सीमा सुरक्षा का दायित्व उसी पर होता था।

हाकिम के सहायक कर्मचारी

परगने में चूँगी कर की वसूली के लिए केन्द्र की ओर से 'सायर का दरोगा' नामक अधिकारी नियुक्त किया जाता था, जिसके अधीन 'अमीन' की नियुक्ति हाकिम द्वारा होती थी।[5] अमीन करों के निर्धारण में निष्पक्ष भूमिका निभाता था। उसका प्राथमिक कार्य कृषि-योग्य समस्त भूमि का पता लगाकर उसकी स्थिति निश्चित करना और नियमों तथा अधिनियमों के अनुसार उनका कर - निर्धारण करना था। साथ ही उसे यह भी देखना पड़ता था कि क्या किसानों से राज्य - शुल्क वसूल कर लिया गया है और वे अन्याय तथा उत्पीड़न के शिकार तो नहीं हैं।[6] 'सायर का दरोगा ' का कार्य परगने से चूंगी और आबकारी करों की वसूली करना था। इसके अधीन 'मुशरफ और पोतदार' नामक कर्मचारी भी होते थे।[7] 'मुशरफ' एक प्रकार से लेखाकार होता था, जो हिसाब-किताब की जाँच कर उन्हें प्रमाणित करता था। पोतदार, एक प्रकार से कोषाध्यक्ष होता था जो नकद रुपये रखने वाला, रुपयों को बदलने वाला, रुपयों तथा सोने चाँदी को तोलने वाला तथा सिक्कों की कीमत लगाने वाला तथा परीक्षा करने वाला अधिकारी होता था।[8] परगनों में 'कानूनगो' नाम का अधिकारी भी होता था। जो भूमि की पैमाइश करने[9], अनाधिकृत कब्जा होने पर दण्ड वसूल करने[10], किसानों से पेशकशी वसूल करने[11] के अतिरिक्त ऐसी बहियों को रखता[12] था जिसमें भूमि संबंधी जानकारी, कर निर्धारण की दरों, पद्धतियों से संबंधित प्रथाओं और नियमों का पूर्ण उल्लेख होता था। वह ऐसी बहियाँ रखता था, जिनसे परगने की कृषि संबंधित परिस्थितियों की पूर्ण जानकारी प्राप्त होती थी।[13] अत: उसका प्रमुख कार्य भूमिकर की वसूली, परगने की कृषिगत उपज का हिसाब रखना तथा भूमि संबंधी दस्तावजों को सुरक्षित रखना होता था। सर जदुनाथ सरकार के अनुसार, ''कानूनगो, नियमों और कानूनों का एक चलता-फिरता कोश तथा कर्मचारियों से संबंधित सूचनाओं, पूर्व-दृष्टान्तों, अतीत के भू-इतिहासों आदि का भण्डार था।''[14]

हाकिम की कचहरी

हाकिम का कार्यालय, 'कचहरी' (*कचेड़ी*) कहलाती थी। जिसमें मुख्यत: *कारकून, इतलाकनवेस, ऊवाकानवेस* और *पोतदार* मुख्य अधिकारी होते थे।[15] *कारकून* एक प्रकार से प्रधान लिपिक होता था। वह अपने अधीन *नवीसदा* जो अनुदान से संबंधित नियम लिखने वाला कर्मचारी होता था, *ताबीनदार* (सेवक सिपाही), *चरवादार* (घोड़े की

देखभाल करने वाला), *चोपदार* (चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी) जैसे कर्मचारी नियुक्त कर सकता था।[16] *कारकून* का मुख्य कार्य था कि वह भू-राजस्व के निर्धारण एवं संग्रह तथा परगने के कोषागार के धन की निरापद अभिरक्षा और उचित वितरण में सहयोग दे। वह दैनिक आय को प्रदर्शित करने वाली एक खाता बही रखता था। सामान्यत: दीवान की पूर्वानूमति के बिना कोषाध्यक्ष को धन के वितरण का अधिकार नहीं होता था तथापि किसी संकटकालीन परिस्थिति में *कारकून* और *हाकिम* धन-वितरण करने की आवश्यक अनुमति दे सकते थे, जिसकी विधिवत् सूचना दरबार में भेजनी पड़ती थी। प्रत्येक ऋतु के अंत में उसे हाकिम को कर-संग्रह और आय-व्यय से संबंधित प्रतिवेदन भेजने पड़ते थे।[17] इसके अतिरिक्त अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के वेतन भी वह स्वयं देता था।[18]

'इतलाकनवेस' (*वाकियानवीस*) और 'ऊवाकानवेस' (*खूफीयानवीस*) ऐसे संवाददाता होते थे जिनके द्वारा हाकिम को सम्पूर्ण परगने के समाचार मिलते रहते थे। 'इतलाकनवेस' सामान्यत: विभिन्न घटनाओं का लेखक अथवा निरीक्षक होता था। परगनों की समस्त घटनाओं एवं बकाया राशि का विवरण इसके पास रहता था। इनमें से महत्वपूर्ण घटनाओं का सारांश वह हाकिम अथवा शासक तक पहुँचाता था। इसी प्रकार 'ऊवाकानवेस' एक प्रकार का गुप्त लेखक होता था। वह एक अत्यन्त विश्वासपात्र अभिकर्ता था। वह स्थानीय अधिकारियों के पास, जो प्राय: उसका नाम भी नहीं जानते थे, बिना किसी प्रकार का पत्र व्यवहार किए ही, गुप्त रीति से विवरण प्रस्तुत किया करता था।

इनके अतिरिक्त 'हलकारा' भी एक प्रकार से गुप्तचर हुआ करते थे, जिनका प्रयोग मुख्यत: युद्ध के समय शत्रु सेना के समाचार लाने के लिए किया जाता था। समस्त सूचनाएँ एवं समाचार हाकिम के अधीन गुप्तचरों के माध्यम से 'डाक चौकी का दरोगा' के पास भेज दिए जाते थे।[19] वह उन्हें बिना खोले ही शासक के सम्मुख रखने के लिए दीवान अथवा प्रधान को दिया करता था। सभी गुप्तचर इसी दरोगा के अधीन कार्य करते थे।[20]

'पोतदार' का पद कोषाध्यक्ष के समतुल्य होता था। उसके कार्यों में राजस्व-संग्रह नकद प्राप्तियों की निरापद अभिरक्षा, लेखा की अनुरक्षा और कोषालय में जमा नकद धन का उचित वितरण, सम्मिलित होते थे। उसे कृषकों द्वारा लायी गई, प्रत्येक सोने-चांदी और तांबे की मुद्राओं को स्वीकार करना होता था। वह *कारकून* और *हाकिम* द्वारा लाये गए धन को उपयुक्त स्थान पर जमा करता और प्रति शाम उसकी गणना भी करता था और साथ ही वह प्राप्तियों की खाता-बही की तुलना *कारकून* की खाता बही से करता था एवं उसे अपने हस्ताक्षर से प्रमाणित करता था।[21] इस प्रकार *हाकिम* और उसके सहायक को परगनों

में प्रशासनिक, राजस्व, न्यायिक और सैनिक अधिकार प्राप्त थे। उल्लेखनीय है कि मारवाड़ में 'कचहरी' की स्थापना और उनमें *हाकिम* एवं अन्य सहायकों की नियुक्ति सवाई राजा सूरसिंह के समय (1595–1619 ई.) में उसके प्रधान भाटी गोविन्ददास ने की थी।[22] यद्यपि 'हाकिम' का पद सल्तनतकालीन प्रशासन की देन है[23] परन्तु मारवाड़ में इसकी विधिवत् स्थापना मुगलों के समय ही की गई थी।

परगने का अन्य महत्वपूर्ण पदाधिकारी फौजदार

यह पदाधिकारी परगना स्तर पर ही नियुक्त किया जाता था। यह *हाकिम* की सेना संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करता था। विभिन्न राजस्व अधिकारियों की कर वसूली में वह सहायता करता था। परगने की सीमा की सुरक्षा प्रबन्धन भी उसके हाथ में था।[24] कभी-कभी उसकी नियुक्ति आपातकालीन परिस्थितियों में अल्पकाल के लिए भी होती थी। नवीन क्षेत्र पर अधिकार करने के लिए भी उसे भेजा जाता था। अत: उसके अधीन एक निश्चित संख्या में सेना होती थी, जिसका वह सेनापति होता था। वह डाकुओं को पकड़ने में भी सहायता करता था। राव मालदेव (1532–1562 ई.) के समय भाटी तेजसी का उल्लेख 'फौजदार' के रूप में हुआ है। वह 'वाहतखड़' नामक स्थान का 'फौजदार' था। सवाई राजा सूरसिंह के समय 1617 ई. में कुँवर गजसिंह ने जालोर का गढ़ जीतकर वहाँ भाटी गोपालदास और राठौड़ दयालदास को गढ़ का फौजदार नियुक्त किया था।[25] महाराजा गजसिंह प्रथम को 1624 ई. में बुरहानपुर का जलगाँव प्रदेश प्राप्त हुआ था, वहां की व्यवस्था करने हेतु फौजदार भाटी सिंघ रूपसिंहोत को भेजा गया था।[26] महाराजा जसवंतसिंह की मृत्यु के पश्चात (1678 ई.) दिल्ली में उपस्थित पदाधिकारियों में फौजदार मेघराज जगावत और रामचंद्र जगावत भी उपस्थित थे। महाराजा अभयसिंह को 1736 ई. में सांभर का परगना मिलने पर, वहाँ मोदी रामजीदास को फौजदार नियुक्त किया था। महाराजा विजयसिंह ने 1765 ई. में पोकरण में सूरजमल को फौजदार नियुक्त किया था चूंकि पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह अवयस्क था।[27]

नगर प्रशासन

मारवाड़ में जोधपुर नगर (राजधानी) और विभिन्न परगनों के प्रमुख नगरों में पृथक रूप से एक प्रशासनिक प्रणाली थी, जहाँ विभिन्न पदाधिकारी कार्यरत थे। जिनका विवरण इस प्रकार है–

कोटवाल

नगर की सम्पूर्ण सुरक्षा का दायित्व *कोटवाल* (कोतवाल) नामक अधिकारी का

होता था। वर्तमान संदर्भ में यह एक पुलिस उच्चाधिकारी था, जिस पर नगर की शांति और व्यवस्था का सम्पूर्ण दायित्व होता था। *कोटवाल* से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह बुद्धिमान, सतर्क, ईमानदार और प्रजा-पालक हो। कोट के दरवाजे अर्थात नगर के प्रवेश द्वार पर सुरक्षा की व्यवस्था रखे और उपद्रवियों अथवा ठगों को पकड़कर उचित दण्ड दे। यदि कोई व्यक्ति बाहर से आकर नगर में ठहरता तो उस मोहल्ले के पंचों का यह दायित्व था कि वे कोटवाल को इसकी सूचना दें। वह जिस घर में ठहरा हो, उसके सदस्यों की भी जिम्मेदारी बनती थी कि वे इसकी सूचना पंचों को दे अर्थात् कोई उसकी जमानत देने वाला होना आवश्यक था, अन्यथा उसे नगर से बाहर ही ठहरना पड़ता था। *कोटवाल* यह भी ध्यान रखता था कि लोग अपने घरों की छतों पर किसी अजनबी को नहीं चढ़ने देवें। रात्रि के समय नगर में पहरा लगा दिया जाता था और रात्रि का प्रथम पहर व्यतीत हो जाने के बाद कोई भी व्यक्ति एक मोहल्ले से दूसरे मोहल्ले में नहीं जा सकता था, लेकिन अत्यन्त आवश्यक होने पर किसी अनुभवी व्यक्ति को साथ जाना पड़ता था। *कोटवाल,* नगर से बाहर और अन्दर जाने वाले सभी द्वारों पर चौकसी रखता था। कुछ घोडों को नगर से बाहर सदैव तैयार रखा जाता था ,ताकि आकस्मिक आवश्यकता होने पर उनका उपयोग किया जा सके। इसके अतिरिक्त विभिन्न मार्गों पर घुड़सवार खड़े रहते थे ताकि कोई वस्तु चोरी से नगर के बाहर नहीं ले जा सके। यात्रियों और व्यापारियों की सुरक्षा के लिए भी नगर में मार्गों पर घुड़सवार नियुक्त रहते थे लेकिन घुड़सवारों को यह स्पष्ट चेतावनी दी जाती थी कि वे बिना किसी कारण के अपने घोड़े न दौड़ाएं। इस प्रकार कोटवाल सुरक्षा का कार्य निभाता था और अपराधियों को पकड़कर उचित दण्ड भी देता था।[28] अतः वह आपराधिक और नागरिक दोनो मामलों को सुलझाता था। इस प्रकार वह एक नगरपालिका अध्यक्ष की भूमिका भी निभाता था और विभिन्न करों की वसूली करता था। वह लोगों को दुकान अथवा घर बनाने हेतु भू-खण्ड भी बेचता था। साथ ही वह सभी प्रकार के तोल और माप का निरीक्षण भी करता था। कोई भी व्यवसाय प्रारम्भ करने से पहले उसकी अनुमति लेना आवश्यक था। उसके गुप्तचर (*हेरू-हलकारे*) सम्पूर्ण नगर पर निगरानी रखते थे और किसी भी चोरी, अपराध, अवैध कब्जों और विभिन्न अधिकारियों द्वारा प्रजा के साथ किये गए दुर्व्यवहार की सूचना *कोटवाल* तक पहुँचाते थे।[29]

नगर की प्रमुख चौकी पर 'चौकीनवेस' नामक अधिकारी नियुक्त रहता था, जो नगर में आने और जाने वाले लोगों का विवरण रखता था और उसकी सूचना कोटवाल को देता रहता था। नगर की रक्षा हेतु 'परकोटे' का निर्माण किया जाता था। जिसके प्रत्येक द्वार

की चाबी कोटवाल के पास ही रहती थी। वह नगर में निर्मित एवं अर्द्धनिर्मित मकानों का पूर्ण विवरण रखा करता था। उनके पट्टे बनाने का कार्यालय भी किया करता था।[30] कोटवाल का कार्यालय 'कोटवाली चौंतरा' (चबूतरा) कहलाता था। अपराधियों को दण्ड देने का कार्य भी यहाँ पर किया जाता था। कार्यालय में उसके अधीन 'मुशरफ' (लेखाकार) और 'पोतदार' (कोषाध्यक्ष) जैसे पद भी होते थे। उनकी नियुक्ति वह स्वयं करता था परन्तु कोटवाल की नियुक्ति शासक द्वारा होती थी। *कोटवाल* एवं उसके सहायकों को प्राय: नकद वेतन मिलता था।[31] *ओहदा बही* से ज्ञात होता है कि जोधपुर नगर के अतिरिक्त नागोर, जालोर, मेड़ता, डीडवाना, सोजत, और पाली नगरों में भी *कोटवालों* की नियुक्ति होती थी।[32]

सिकदार

मारवाड़ में राव मालदेव के शासनकाल (1532-1562 ई.) में हमें 'सिकदार' पद का उल्लेख मिलता है। उस काल में उनकी नियुक्ति परगना- स्तर पर होती थी। यह अधिकारी मुख्यत: परगने की सुरक्षा व्यवस्था देखता था। विभिन्न नगरों में कोतवाल पद के सृजन से पूर्व उसके कार्य भी 'सिकदार' ही करता था। परगनों का सर्वोच्चाधिकारी 'हाकिम' ही होता था परन्तु उसकी अनुपस्थिति में राजस्व वसूली का कार्य सिकदार करता था अत: परिस्थिति के अनुसार उसे अपने कार्य निभाने पड़ते थे और समय के साथ-साथ उसके कार्य-क्षेत्र और कर्तव्यों में भी परिवर्तन आया।

कटक (सेना) की कोटवाली

यह पद *कोटवाल* और *सिकदार* से भिन्न था। उसे 'लश्कर की सिकदारी' से भी जाना जाता था।[33] यह पद भी *सिकदार* की तरह सोभावत राठौड़ों को ही मिलता था। इस पद पर नियुक्त व्यक्ति को महाराजा के किसी गन्तव्य स्थान की यात्रा करने पर मारवाड़ के राजकीय झण्डे की रक्षार्थ उपस्थित होना पड़ता था।[34] उस झण्डे से ही ऐसी पंक्तियां बनाई जाती थीं, जिनके अनुसार विभिन्न सामंत अपनी श्रेणी के अनुसार खड़े रहते थे। इसके अतिरिक्त हरावल का सामंत भी झण्डे के आगे उपस्थित रहता था। साथ ही कवच एवं शस्त्रधारी (*सिल्हपोस*), मार्गदर्शक (*पागी*) और वैयक्तिक सहायक (*पैश्दस्त*) भी कटक के कोटवाल के साथ रहते थे। उस झण्डे को उठाने एवं आगे बढ़ाने हेतु 30-40 सैनिक साथ चलते थे। यह झण्डा मांगलिक एवं शुभ माना जाता था और महाराजा के गौरव और स्वाभिमान का प्रतीक था, उसकी ध्वजा पर चील का चिन्ह भी अंकित रहता था, जो शक्ति का प्रतीक है।[35]

ग्राम प्रशासन

मारवाड़ में हमें 'पंच' और ग्राम के मुखिया अर्थात् *चौधरी* का उल्लेख मिलता है। पाली और उसके आस-पास के गांवों में जब 'मेर' जाति का उपद्रव बढ़ने लगा तब राव आस्थान (1273-1292 ई.) ने उनका दमन किया था। तत्पश्चात् उस क्षेत्र के पंच लोग एकत्रित हुए और यह निर्णय लिया कि राव आस्थान को वहीं रोककर अपनी सुरक्षा का प्रबन्ध करना उचित होगा। अत: वह पाली में ही रुक गया। तत्पश्चात् आस-पास के गांवो से भी चौधरी राव आस्थान से आकर मिले और अपनी सुरक्षा के बदले अपनी आय का कुछ भाग राव आस्थान को देने का प्रस्ताव उनके समक्ष रखा जिसे राव आस्थान ने स्वीकार कर लिया था।[36] अत: राठोड़ों के मारवाड़ में आगमन से पूर्व भी यहां पंच और चौधरी का अस्तित्व था।

मारवाड़ में कुछ गांव ऐसे भी होते थे, जिनका प्रबन्ध एवं सुरक्षा का कार्य 'भोमिया' लोग करते थे।[37] *भोमिया* अर्थात् जिन्होने स्वयं के बाहुबल से गांव पर अधिकार किया हो। उन्हें अपनी आय का कुछ अंश मारवाड़ के शासक को देना पड़ता था। अधिकांशत: उनके आंतरिक मामलों में शासक हस्तक्षेप नहीं करता था। इसी प्रकार जागीर में प्राप्त गांवों पर भी 'जागीरदार' का अधिकार रहता था, लेकिन उसकी सहायता के लिए गांवों में चौधरियों की नियुक्ति की जाती थी अथवा वे वहां पहले से ही उपस्थित मिलते थे और जागीरदार को वहां प्रबन्ध करने में सहायता करते थे। इसी प्रकार गांवों में पंच अथवा पंचायत जैसी संस्थाएं भी होती थीं जो अधिकांशत: *भोमिया,* जागीरदार और शासक के हस्तक्षेप के बिना आपसी मामले सुलझा लिया करती थी। 18वीं शताब्दी में अधिकांश ग्रामीण प्रशासन इन संस्थाओं के हाथ में था। वे ग्रामीणों की सुरक्षा, व्यापार पर नियंत्रण और न्याय जैसे कार्य करती थीं। हाकिमों और उनके अधीन कर्मचारियों के पास न तो इतना समय था कि वे लोगों की शिकायतों की ओर ध्यान दे सकें।[38] गांवों में जातीय पंचायतें भी होती थीं जो अपनी जाति के आपसी मामलों को सुलझाती थीं।[39] *चौधरी* को राज्य द्वारा नियुक्ति मिलने पर पेशकशी भी देनी पड़ती थी, इसी प्रकार उस अवसर पर ग्रामीण उसे 'चौधर बाब' नामक नजराना दिया करते थे।[40] गांवों की सम्पूर्ण सुरक्षा एवं प्रबन्ध उसके हाथ में रहता था। जब किसी जागीरदार को जागीर में कई गांव मिलते थे तो शासक की ओर से चौधरियों को यह आदेश मिलता था कि वे लोग जागीरदार को वहां अधिकार करने में सहायता करें।[41] इसके अतिरिक्त गांव जब्त होने पर अथवा खालसा होने पर वहां शासक की ओर से 'हवालदार' भी नियुक्त किए जाते थे, जो करों की वसूली में चौधरी की

सहायता करते थे।[42] इसी प्रकार राज्य की ओर से *कनवारी*[43] (खेत का रक्षक), *तफेदार* (राज्य का लेखा-जोखा रखने वाला), *तलवाटी* (उपज को तोलने वाला), *शहना* (कर प्रणाली का प्रबन्धक) और चौकीदार जैसे कर्मचारी भी गांवों में नियुक्त किए जाते थे।[44] करों की वसूली में किसी प्रकार की कठिनाई आने पर चौधरी ही ऐसा व्यक्ति होता था जो उक्त कर्मचारियों की सहायता कर सकता था चूंकि उसका ग्रामीणों से सीधा सम्पर्क रहता था। कर एकत्रित करके हाकिम को सौंप दिया जाता था। जिसमें से कुछ अंश वेतन के रूप में उक्त कर्मचारियों एवं चौधरी को प्राप्त होता था।[45]

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि मुगल प्रशासन के प्रभाव से मारवाड़ के परगनों एवं नगरों के शासन मंर कई परिवर्तन हुए लेकिन दूसरी ओर ग्रामीण प्रशासन अपनी प्राचीन परम्पराओं को निरंतरता देने में सफल हुआ। परगनों का सर्वोच्च अधिकारी हाकिम होता था, जिसे सैनिक, राजस्व और न्यायिक अधिकार प्राप्त थे। करों की वसूली में सायर का दरोगा, अमीन और कानूनगो उसकी सहायता करते थे। *हाकिम* का कार्यालय कचेड़ी कहलाता था, जिसमें कारकून, इतलाकनवेस और पोतदार जैसे कर्मचारी होते थे। हाकिम का पद अधिकांशत: ओसवालों (भण्डारी, सिंघवी आदि) को ही मिलता था। स्पष्टत: उन्हें परगनों की सुरक्षा के अतिरिक्त, वहां की आय-व्यय का हिसाब भी रखना पड़ता था, जो उनका वंशानुगत कार्य भी था। कभी -कभी ब्राह्मणों की भी इस पद पर नियुक्ति होती थी। *हाकिम* के सैनिक कार्यों में *फौजदार* और थानेदार जैसे पदाधिकारी सहायता करते थे। नगरों का प्रमुख अधिकारी *कोटवाल* होता था। नगरों की सुरक्षा, न्याय आदि कार्य उसके हाथ में होते थे। उसका कार्यालय *कोटवाली चौंतरा* कहलाता था। जिसमें *मुशरफ* और *पोतदार* जैसे कर्मचारी नियुक्त किए जाते थे। *कोटवाल* का पद अधिकांशत: राजपूतों को ही मिलता था। परगने में *सिकदार* का पद भी महत्वपूर्ण था। 16वीं-17वीं शताब्दी में इसकी नियुक्ति परगना स्तर पर होती थी तत्पश्चात् यह पद राजधानी तक सीमित रह गया। ग्रामों का शासन प्रमुखत: पंचायत और चौधरी के हाथों में रहता था। ये लोग कई मामलें राज्य के हस्तक्षेप के बिना ही निपटा लेते थे। इस प्रकार आलोच्यकाल में ग्रामीण प्रशासन मराठा आक्रमणों जैसी विपरित परिस्थितियों के बावजूद भी अपने प्राचीन स्वरूप को बनाये रखने में सफल रहा।

सन्दर्भ

1. *हकीकत बही,* नं.1, वि.सं.1820-1830/1763-1773 ई., पृ. 184, जोधपुर

रिकॉर्ड्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

2. *ब्याव री बही,* नं.1, वि.सं.1776/1719 ई., पृ. 217, जोधपुर रिकॉर्ड्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

3. *हकीकत बही,* नं.1, वि.सं.1820–1830/1763–1773 ई., पृ. 376, 626, 627; *हथ बही,* नं.1, वि.सं.1824/ 1767 ई., पृ. 54–57, जोधपुर रिकॉर्ड्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

4. *अरजी बही,* नं. 4, वि.सं.1829/1772 ई. पृ. 47–49, जोधपुर रिकॉर्ड्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

5. शिवदत्तदान बारहठ, *जोधपुर राज्य का इतिहास (1753–1800 ई.)*, पृ. 212, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1991

6. एन.ए. सिद्दीकी, *मुगलकालीन भू–राजस्व प्रशासन,* पृ. 105–06, राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977; जदुनाथ सरकार, *मुगल शासन पद्धति,* पृ. 64–65, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा, 1964

7. *ओहदा बही,* नं.2, वि.सं.1820–1900/1763–1843 ई., पृ. 83–86, जोधपुर रिकॉर्ड्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

8. सरकार जदुनाथ, *मुगल शासन पद्धति,* पृ. 31

9. मुहनोत नैणसी, *मारवाड़ रा परगना री विगत,* (संपा.) नारायण सिंह भाटी, खण्ड 1, पृ. 164 और खण्ड 2, पृ. 77, 369 राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, 1968 एवं 1969

10. *सनद परवाना बही,* नं.13, वि.सं.1830/1773 ई., पृ. 296, जोधपुर रिकॉर्ड्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

11. *सनद परवाना बही,* नं.2, वि.सं.1822/1765 ई., पृ. 20, 24; *बही,* नं. 14, वि.सं.1831/, पृ. 56, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

12. *मारवाड़ रा परगना री विगत,* खण्ड 2, पृ. 371

13. एन.ए. सिद्दीकी, *मुगलकालीन भू–राजस्व प्रशासन,* पृ. 110

14. जदुनाथ सरकार, *मुगल शासन पद्धति,* पृ. 66

15. *ओहदा बही,* नं. 2, वि.सं.1820–1900/1763–1843 ई., पृ. 74–79

16. *सनद परवाना बही,* नं. 14, वि.सं.1831/1774 ई., पृ. 18, 55; *बही,* नं. 4, वि.सं. 1823/1766 ई., पृ. 29, जोधपुर रिकॉर्ड्स

17. एन.ए. सिद्दीकी, *मुगलकालीन भू-राजस्व प्रशासन,* पृ. 106-107
18. *सनद परवाना बही,* नं. 13, वि.सं.1830/1773 ई., पृ. 244
19. *मारवाड़ रा परगना री विगत,* खण्ड 1, पृ. 67 और खण्ड 2, पृ. 483
20. सरकार जदुनाथ, *मुगल शासन पद्धति,* पृ. 52-54; ए.एल. श्रीवास्तव, *मुगलकालीन भारत,* शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा, 1971, पृ. 497
21. एन.ए. सिद्दीकी, *मुगलकालीन भू-राजस्व प्रशासन,* पृ. 107-108
22. *मूंदियाड़ री ख्यात,* (संपा.) विक्रमसिंह भाटी, इतिहास अनुसंधान संस्थान, जोधपुर, 2005, पृ. 58
23. हरिश्चन्द्र वर्मा, *मध्यकालीन भारत,* खण्ड 1, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2003, पृ. 349, 352
24. गोपीनाथ शर्मा, *राजस्थान स्टडीज,* लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 1970, पृ. 186
25. *मारवाड़ रा परगनां री विगत,* खण्ड 1, पृ. 44, 102
26. वही पृ. 108; *राठौड़ां री ख्यात,* (संपा.) हुकमसिंह भाटी, खण्ड 1, पृ. 167
27. *राठौड़ां री ख्यात,* (संपा.) हुकमसिंह भाटी, खण्ड 2, पृ. 309, 464; खण्ड 3, पृ. 583
28. *ब्याव री बही,* नं.1, वि.सं.1776/1719 ई., पृ. 215, जोधपुर रिकॉर्ड्स
29. *सनद परवाना बही,* नं. 6, वि.सं.1824/1767 ई., पृ. 70; *बही,* नं. 29, वि.सं. 1840/1783 ई., पृ. 230, 293, 300; जी.सी. शर्मा, *एडमिनिस्ट्रेटिव सिस्टम ऑफ राजपूत,* राजेश पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1979, पृ. 84, 85; गोपीनाथ शर्मा, *राजस्थान का इतिहास,* पृ. 628
30. *ओहदा बही,* नं. 1, वि.सं.1765-1941/1708-1884 ई., पृ. 47; *ओहदा बही,* नं. 2, वि.सं. 1820-1900/1763-1843 ई., पृ. 23, जोधपुर रिकॉर्ड्स
31. *सनद परवाना बही,* नं. 4, वि.सं.1823/1766 ई., पृ. 57; *बही,* नं. 13, वि.सं. 1830/, पृ. 128, 177, जोधपुर रिकॉर्ड्स
32. *ओहदा बही,* नं. 1, वि.सं.1765-1941/1708-1884 ई., पृ. 210, 228, 248, 282, 352, 364; *ओहदा बही,* नं. 2, वि.सं.1820-1900/1763-1843 ई., पृ. 81, 95, 112, 140, 193, 204, 224, जोधपुर रिकॉर्ड्स
33. *ठिकाना पाल री ख्यात,* (संपा.) विक्रमसिंह भाटी, जोधपुर, 2003, पृ. 61, 87

34. टिप्पणी- मारवाड़ का झण्डा पचरंगा था, जिसमें क्रमशः गेरुआ, सफेद, लाल, केसरिया और हरे रंग की पट्टियां होती थीं।

35. *ठिकाना पाल री ख्यात,* (संपा.) विक्रमसिंह भाटी, जोधपुर, पृ. 66

36. *मारवाड़ रा परगना री विगत,* खण्ड 1, पृ. 9-11

37. *मारवाड़ रा परगना री फरसत,* (संपा.) हुकमसिंह भाटी, राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर, 2005, पृ. 80

38. पद्मजा शर्मा, *जोधपुर के महाराजा मानसिंह और उनका काल,* राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1974, पृ. 195-196

39. *सनद परवाना बही,* नं. 13, वि.सं.1830/1773 ई., पृ. 296

40. जी.सी. शर्मा, *एडमिनिस्ट्रेटिव सिस्टम ऑफ राजपूत,* पृ. 114, 121

41. *खेजड़ला ठिकाने के पट्टे-परवाने,* (संपा.) विक्रमसिंह भाटी, इतिहास अनुसंधान संस्थान, जोधपुर, 2006, पृ. 10-12

42. *मारवाड़ रा परगना री फरसत,* (संपा.) हुकमसिंह भाटी, पृ. 1; *सनद परवाना बही,* नं. 14, वि.सं.1831/1774 ई., पृ. 59, 314

43. *सनद परवाना बही,* नं. 14, वि.सं.1831/1774 ई., जोधपुर रिकॉर्ड्स, पृ. 130

44. गोपीनाथ शर्मा, *राजस्थान स्टडीज,* पृ. 187; जबर सिंह, *द ईस्ट इण्डिया कम्पनी एण्ड मारवाड़,* पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1973, पृ. 185

45. जी.सी. शर्मा, *एडमिनिस्ट्रेटिव सिस्टम ऑफ राजपूत,* पृ. 102

सहायक निदेशक
राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी
जोधपुर (राजस्थान)